

हिन्दुस्तान

विवादों के बीच आईपीएल

इंडियन प्रीमियर लीग (आईपीएल) की जब से शुरुआत हुई है, तभी से विवाद उसके साथ जुड़े रहे हैं, लेकिन इस साल उसका कुछ ज्यादा मुश्किल इम्तिहान है। पिछले आईपीएल के दौरान मैच फिक्सिंग का पर्दाफाश हुआ था और यह देखना है कि इसका कितना असर आईपीएल पर पड़ा है। मैच फिक्सिंग मामले में भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड यानी बीसीसीआई के शक्तिशाली अध्यक्ष एन श्रीनिवासन पर भी आंच आई है और सुप्रीम कोर्ट द्वारा बिठाई गई मुद्दाल कमेटी ने कहा है कि आईपीएल और बीसीसीआई में सब कुछ ठीक नहीं है। श्रीनिवासन को सुप्रीम कोर्ट ने बीसीसीआई के कामकाज से अलग रहने का आदेश दिया है। जिस दिन आईपीएल का उद्घाटन हुआ, उसी दिन सुप्रीम कोर्ट ने श्रीनिवासन को किसी किस्म की रहत देने से इनकार कर दिया। आईपीएल को लेकर पहला बड़ा विवाद पिछले लोकसभा चुनावों के दौरान हुआ था। तब तत्कालीन गृह मंत्री पी चिदंबरम ने बीसीसीआई से अनुरोध किया था कि वह चुनावों के मद्देनजर आईपीएल का आयोजन कुछ वक्त के लिए टाल दे। उनका कहना था कि चुनावों में तमाम सुरक्षा बलों की व्यस्तता के चलते आईपीएल की सुरक्षा मुमकिन नहीं होगी। अनुरोध मानने की बजाय बीसीसीआई ने जैसे सरकार को चिढ़ाते हुए आईपीएल का आयोजन दक्षिण अफ्रीका में कर दिया। यह टकराव बीसीसीआई को महंगा पड़ा और ललित मोदी के आईपीएल से बाहर होने की कुछ हद तक वजह वह टकराव भी था।

इस बार भी आईपीएल आम चुनाव के दौर में ही हो रहा है, लेकिन आयोजकों ने समझदारी दिखाते हुए शुरुआती आधे हिस्से का आयोजन संयुक्त अरब अमीरात में करने का फैसला किया है। मई के महीने में आईपीएल के मैच भारत में खेले जाएंगे। इस आयोजन के साथ लंबे वक्त के बाद संयुक्त अरब अमीरात में क्रिकेट और मनोरंजन का कार्यक्रम होगा। लगभग बीस-पच्चीस साल पहले शारजाह में एक अमीर व्यापारी अबुल रहमान बुखातिर एकदिवसीय क्रिकेट की प्रतियोगिता आयोजित किया करते थे। तब टी-ट्वेंटी क्रिकेट का आविष्कार नहीं हुआ था, लेकिन वह आयोजन आईपीएल जैसा ही होता था। उसमें तमाम भारतीय फिल्मी सितारों को आमंत्रित किया जाता था, मैचों के बाद भव्य पार्टियां होती थीं। कुख्यात अपराधी दाऊद इब्राहिम तब दुबई में रहता था और इन मैचों में उसे वीआईपी दर्शक दीर्घा में फिल्मी सितारों व अमीर लोगों के बीच बैठे देखा जा सकता था। धीरे-धीरे वहां सट्टेबाजी और मैच फिक्सिंग का बोलबाला हो गया और उसके भंडाफोड़ के बाद शारजाह में क्रिकेट का तमाशा बंद ही हो गया। यह भी एक अजीब संयोग है कि मैच फिक्सिंग के आरोपों से उबरने की कोशिश में आईपीएल फिर शारजाह के मैदान की ओर चल पड़ा है। उम्मीद यही है कि क्रिकेट इस कलंक से उबर जाएगा, न कि इस दलदल में ज्यादा गहरा धंसेगा।

आईपीएल अब भी फायदे का सौदा है। भारतीय दर्शक बड़ी संख्या में इसे देखते हैं, लेकिन इसकी लोकप्रियता घटती जा रही है। इस साल यह देखना है कि भारतीय दर्शकों की कितनी दिलचस्पी इसमें है, क्योंकि यहां फिलहाल बहुत दिलचस्प आम चुनाव लड़े जा रहे हैं। आईपीएल सचमुच एक अच्छी परिकल्पना है, लेकिन देखना यह है कि बीसीसीआई सोने का अंडा देने वाली इस मुर्गी के साथ क्या करता है। अभी तक तो बीसीसीआई ने लालच और लापरवाही का ही सबूत दिया है। इस बार सुनील गावस्कर के अस्थायी कामचलाऊ नेतृत्व में आईपीएल हो रहा है, लेकिन शायद इसकी दशा-दिशा इस आयोजन में काफी कुछ तय हो जाएगी।

विदेशी अखबार से

अमन-सुलह का मायाजाल

मध्य-पूर्व (हिन्दुस्तान से पश्चिम एशिया) में अमन-सुलह पर अमल फीनिक्स की तरह है। जब भी कोई यह कयास लगाता है कि कबवाद नाकाम रही, तभी उससे उम्मीद की चिनगारियां निकलने लगती हैं। हाल ही में अमेरिकी विदेश मंत्री जॉन केरी ने एक पहल की। कुछ दिनों पहले तक माना जा रहा था कि उनकी यह पहल यकीनन बेकार साबित होगी। यहां तक कि खुद केरी ने जमीनी हकीकत को देखते हुए कामयाबी की उम्मीद छोड़ दी थी। मगर अब यह खबर आई है कि सुलह-समझौते की उम्मीद अभी बाकी है। इजरायल और फलस्तीन के वार्ताकार सुलह-समझौते को और व्यापक बनाने के रास्ते तलाश रहे हैं और इसे 29 अप्रैल तक की मोहलत से परे ले जाना चाहते हैं। एक अमेरिकी अफसर ने यह जानकारी दी है। कल भी दोनों तरफ के वार्ताकारों के बीच बातचीत हुई। बीते नतीजों पर जाएं, तो ताजा कवायद की उम्र का अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं। लेकिन सराहनीय बात यह है कि बड़ी चुनौतियों के बावजूद अमेरिका इसमें दिलचस्पी ले रहा है। यकीनन, इजरायल-फलस्तीन के बीच सुलह-समझौते को लेकर जॉन केरी की प्रतिबद्धता देखने लायक है। बेशक इयके लिए उन्हें कुछ इजरायली मंत्री कोस रहे हैं, उनकी कवायद की इजरायल में आलोचनाएं हो रही हैं। लेकिन अमेरिका इन सबसे बेखोफ है। उसने अपनी तरफ से काफी ऊर्जा झोंक दी है, बेशकीमती वक्त लगाए गए हैं। यहां तक कि उन दक्षिणपंथी मंत्रियों की नाराजगी भी मोल ले गई है, जो इस बातचीत को बिगाड़ने के लिए किसी भी हद तक जा सकते हैं। फलस्तीनी अरसे से यह कहते आ रहे हैं कि इजरायली अमन-सुलह के लिए कतई तैयार नहीं हैं और वे जान-बूझकर मध्यस्थता को नाकाम कर सकते हैं। हाल की नाकामी से उनकी बात सही भी साबित होती है। यहां तक कि अमेरिकी अफसरों ने भी इसे माना है और चोरी-छिपे कहा है कि तेल अवीव गतिरोध के लिए जिम्मेदार है। ऐसे में, अगर ओबामा प्रशासन मध्य-पूर्व में वाकई अमन-सुलह चाहता है, तो वह न केवल दोनों पक्षों को बातचीत की मेज पर लाए, बल्कि इसकी कामयाबी के लिए इजरायली हुकूमत पर दबाव भी बनाए।

दपेनिनसुला , कतर

75 साल पहले

हिन्दुस्तान Hindustan
अनुकरणीय उदाहरण
कराची कापोरेशन ने स्वदेशी वस्तुओं के प्रचार और स्वदेशी वस्तुओं को उत्तेजन देने के ख्वाल से अपने शहर में एक स्वदेशी प्रदर्शनी का आयोजन किया है। भारत में किसी म्युनिसिपैलिटी या कापोरेशन द्वारा स्वदेशी प्रदर्शनी खोलने का यह पहला उदाहरण है। यदि देश की अन्य म्युनिसिपैलिटियां भी कराची कापोरेशन का अनुकरण करें, तो इससे जहां उनको आर्थिक लाभ होगा, उन्हे नागरिकों का मनोरंजन के साथ साथ ज्ञान भी बढ़ेगा, वहीं स्वदेशी वस्तुओं के लिए नए ग्राहक पैदा होंगे और स्वदेशी व्यवसायों को प्रोत्साहन और उत्तेजन मिलेगा। क्या हम आशा करें कि अन्य म्युनिसिपैलिटियां भी कराची का अनुकरण करेंगी।
स्मारक बनाओ- यह प्रसन्नता की बात है कि लाहौर के नागरिकों ने स्व. लाला हरदयाल का स्मारक बनाने का निश्चय किया है। मगर हमें इस बात पर आश्चर्य हुआ कि दिल्ली ने अलाए एक योग्यतम नागरिक का सम्मान करने अभी तक उत्तेजन नहीं समझा है। लाला हरदयाल दिल्ली में उपन्युन हुए, यहाँ पत्ने, इसी शहर में उन्होंने शिक्षा पाई और इस नगर में उन्होंने शिक्षा दान का महान कार्य किया। यह सब होते हुए भी दिल्ली ने अपने एक योग्यतम स्व. पुत्र का स्मारक बनाने का विचार तक नहीं किया। यह एक आश्चर्य की बात है।
15 अप्रैल, 1939 को प्रकाशित सामयिक-चर्चा के अंग

क्या वाकई मोदी की लहर है

यूपीए से वोटरों का मोहभंग, भाजपा का भरोसेमंद विकल्प बनना और मोदी का उमार- एक साथ दिख रहे तीन रुझानों में मोदी फैक्टर सबसे बाद में है।

यह इस लोकसभा चुनाव के बहुचर्चित सवालों में से एक है। लेकिन इस सवाल का कोई सीधा और स्पष्ट जवाब नहीं हो सकता। पूरे देश में पूछा जा रहा है कि क्या वाकई नरेंद्र मोदी की कोई लहर चल रही है? लेकिन यह भी साफ है कि नरेंद्र मोदी के इर्द-गिर्द केंद्रित आक्रामक अभियान देश के हर कोने में एक समान मोदी लहर पैदा करने में नाकाम है। हालाँकि, कुछ राज्यों में भारतीय जनता पार्टी	के मतदाता प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार के नाम पर वोट करते दिख रहे हैं, लेकिन अन्य राज्यों में मतदाता अब भी पार्टी को ध्यान में रखते हुए वोट देने का फैसला कर रहे हैं। भाजपा के ही ऐसे मतदाता भी हैं, जिन्होंने संकेत दिया है कि पार्टी द्वारा उतारे गए स्थानीय उम्मीदवार ही उनकी पसंद हैं। यह सच है कि दक्षिण भारत के राज्यों में भाजपा अपना जनाधार बढ़ाने में सफल रही है। लेकिन यह साफ दिख रहा है कि पार्टी वहां लोकसभा की सीटें जीतने से अब भी दूर है। हां, इस मामले में कर्नाटक एक अपवाद हो सकता है। इसी तरह, राष्ट्रीय स्तर पर और उत्तर भारत में मोदी का करिश्मा शायद उतना काम नहीं कर रहा, जितना कि संग्रम सरकार से असंतोष का असर दिख रहा है। इसी असंतोष की वजह से भाजपा को चुनाव के मैदान में अन्य सिपायी पार्टियों से बढ़त लेने में मदद मिल रही है। यह तो रहा पूरे देश का मिजाज, लेकिन विभिन्न राज्यों से भी अलग-अलग रुझान मिल रहे हैं। नरेंद्र मोदी की अपील भाजपा को उन प्रांतों में वोट खींचने में अच्छी मदद कर रही है, जहां उसका आधार अपेक्षाकृत छोटा है या
उमार्शंकर शुक्ल	
नशतर	
उन्होंने जिसको छुआ, वही सोने का हुआ	
नेता जिस काम में हाथ डालते हैं, उन्हें वहीं तटवर्षी हसिल होती है।	बढ़ती रहती है। कितने नेताओं ने कितने अपराध किए, यह बताना अब मुश्किल है, क्योंकि सभी पकड़े नहीं जाते। जो नेता अपराधी नहीं थे, वे अब रिवरयर कर दिए गए हैं और जो अपराधी शुद्ध अपराधी थे, राजनीति में नहीं थे, वे एनकाउंटर में मारे गए। नेता ठेकेदारी में हैं, इसलिए यह धंधा फल-फूल रहा है। अपराध भी इसी वजह से फल-फूल रहे हैं। नेता औद्योगिक उत्पादन के काम में अमूमन नहीं हैं, इसलिए औद्योगिक उत्पादन की अर्थव्यवस्था में भागीदारी 15 प्रतिशत से कम है। अर्थशास्त्री कहते हैं कि अगर देश को तरक्की करनी है, तो औद्योगिक उत्पादन बढ़ाना जरूरी है। इसके लिए वे तरह-तरह के उपाय सुझाते हैं, लेकिन दरहकीकत ये सब बेकार है। भारत में वही क्षेत्र फलता-फूलता है, जिसमें नेता होते हैं। किसी भी किस्म के उत्पादन में नेताओं की
एक दौर था, जब नेताओं का पूंजीपतियों, ठेकेदारों और अपराधियों से गठजोड़ था। अब ऐसा नहीं है। जमाना मल्टी टास्किंग का है, इसलिए नेता ही ठेकेदार, पूंजीपति और अपराधी हो गए हैं। पुराने जमाने के नेता शुद्ध नेता थे, वे राजनीति के अलावा कुछ नहीं करते थे। अगर पैसा चाहिए होता था, तो पूंजीपति से कह देते थे, कुछ आपराधिक जरूरत होती, तो अपने किसी खास अपराधी से कह देते। अब हर नेता की तीन-चार कंपनियां हैं और आफें गिरोह है। चुनाव में जितने नेता खड़े हैं, उनमें से शायद 99 प्रतिशत के जमीन और कंस्ट्रक्शन से जुड़े धंधे हैं, जिनमें उनकी आय रहस्यमय ढंग से तकरीबन 100 से 200 प्रतिशत सालाना के हिसाब से	
साइबर संसार	
बात करना जरूरी क्यों है	
तुमसे बात करना हर रोज़ डायरी लिखने जैसा है। सारे दिन की उथल-पुथल, दुर्गिधाएं, व्याकुलता, खुशियों के छोट-छोट लम्हे, सब कुछ तुम्हें बताकर, तुम्हें सौंपकर खुद को एकदम खाली कर देने जैसा, फिर से एक नया दिन के नए अनुभव इकट्ठा करने के लिए।...जिस दिन तुम नहीं मिलते, लगता है कि कितना कुछ रह गया है भीतर, जिनको निकलना था बाहर। तुमसे बात करना सारे दिन की थकन के बाद अपना पसंदीदा संगीत सुनते हुए शाम की ठंडी हवा में बैठ इलायची वाली चाय पीने जैसा है...लरेक्सिंग! मन को नई स्फूर्ति से भर देने वाला। तुमसे बात करना ऐसे है, जैसे लू भी दोपहर में ठंडे पानी का एक घूंट मिल जाना... चिलचिलाती धूप में गैलद की घनी छाया मिल जाने जैसा, तुमसे बात करना किसी उमस भरी शाम पानी के पोखर में पर डाल घंटों बैठे रहने जैसा है। ठंडक तलवों से होते हुए कब मन तक पहुंच जाती है, पता ही नहीं चलता। तुमसे बात करना सिर्फ तुम्हारे साथ समय बिताने का निमित्त मात्र है, जिस किसी वजह की जरूरत नहीं होती। सांझ ढले तुम्हारी आवाज जब कानों में घुलती है, तो दिग्न भर में मन पर उमर आई खराशों पर मलहम-सा लग जाता है। मानती हूं कि हम बहुत झगड़ने लगे हैं इन दिनों, पर एक आदत हम दोनों में एक-सी है, बुरे पल हम कभी याद नहीं रखते। तुम्हारी यादों से भीनी गलियों में उन पलों को आने की इजाजत नहीं, वहां सिर्फ तुम्हारी मिठास बसती है और तुम मुस्कुरते, गुनगुनाते हुए- बादल, बिजली, चंदन, पानी जैसा अपना प्यार!	इस दौर में कई बातें आपके मन पर रोज खराशें डाल रही हैं, ऐसे में कुछ सरस बोलकर देखिए।
लमहों के झरोखे से भं रिचा	
लेकिन इस आदेश का क्या मतलब है, जब ओपिनियन पोल प्रसारित हो ही रहे हैं और वे वोटरों को एक दिशा में बहा ले जा रहे हैं? साफ है, चुनाव आयुक्त अगर सचने न हो, तो यही सब होता है। लेकिन फिर भी हम सभी जानते हैं कि चुनाव आयोग शेखी बघारने से पीछे नहीं हटेगा।	
दमन शर्मा गणेश नगर, दिल्ली-92	
अमर्यादित तरीका	आए दिन समाचारों से यह ज्ञात होता है कि आम आदमी पार्टी के नेता अरविंद केजरीवाल पर हमला हुआ। इस प्रकार की हरकत न केवल कारगरना है, वरन अग्रजातांत्रिक व आपराधिक भी है। केजरीवाल पर हो रहे लगातार हमले यह सोचने के लिए बाध्य करते हैं कि कहीं 'यह एक सुनियोजित

संजय कुमार
प्रोफेसर और निदेशक,
सीएसडीएस

उसका स्थानीय पार्टियों
राज्यों में भी भाजपा की
बीते वर्षों में अन्य क्षेत्रीय
इन दोनों रुझानों के उ
हरियाणा और झारखंड
ओडीशा और दिल्ली में
मोदी के नाम पर पार्टी को
भाजपा मतदाताओं ने पा
पर वोट देने के रुझान दि
में ऐसे भाजपा मतदाता
यह मानते हैं कि उन्हें नरें
को वोट कर सकते हैं।
की तादाद सबसे अधि
की बात करते हैं।

उन राज्यों में, जहां
या उसने हाल के विधा
संख्या में मतदाता यही
दे सकते हैं। ये राज्य हैं,
और राजस्थान। लेकिन
में है कि मतदाता पार्टी
करते हैं, न कि नरेंद्र मोदी
के 32 प्रतिशत मतदाता
के लिए पार्टी को वोट
मतदाताओं ने कहा कि
नरेंद्र मोदी और शिवरा
प्रधानमंत्री का चुनाव
तुलना में चौहान को वे
बिबुलुल साफ संकेत है कि

हमारे देश में सेवा क्षेत्र अच्छी हालत में है, क्योंकि 'सेवा' में नेताओं की भारी दिलचस्पी है।
दिलचस्पी नहीं है, इसलिए औद्योगिक उत्पादन पिछड़ रहा है। सेवा क्षेत्र अच्छी हालत में है, क्योंकि 'सेवा' में नेताओं की भारी दिलचस्पी है, हर नेता कहता है कि वह सेवा करना चाहता है। पहले जब नेता ठेकेदारी और अपराध को बाहर से समर्थन दे रहे थे, तब ये क्षेत्र इतने फलते-फूलते नहीं थे। जब नेताओं ने स्थायित्व की खातिर इन कारोबारों में शामिल होने का फैसला किया, तब से इन क्षेत्रों का असली विकास हुआ। लोकतंत्र को नेता बाहर से समर्थन दे रहे हैं। उसकी क्या हालत है, देख लीजिए।
राजेन्द्र थोड़पकर

मनसा वाचा कर्मणा
मौन का गीत सुनो
इन दिनों हमारे हाथों में तरह-तरह के गैजेट्स हैं। घर हो, ऑफिस या सफर, हर वक्त हमारे हाथों में कभी मोबाइल फोन, कभी लैपटॉप या आईपैड होता है। ऐसे में, हमारे मन को कभी भी चैन या सुकून नहीं मिलता। हमारा ज्यादातर समय फोन या कंप्यूटर पर फिजूल की बातें करने में बीताता है। इन कामों में जुबान खामोश भी हो, तो दिमाग बातें करता रहता है। इससे मन की शांति भंग होती है। हमारा मौन छिनता है। इस मौन के न होने के कारण न हम दूसरों के बारे में कुछ सोच पाते हैं और न ही अपने बारे में। इसी से तनाव की शुरुआत हो जाती है। महात्मा गांधी अक्सर 'मौन त्राट' रखते थे, ताकि अपनी आंतरिक शक्ति को संचित कर सकें। 'ओश' तो 'मौन' को सबसे बड़ा नाद योग मानते थे। जबकि, मनोवैज्ञानिक सैमुअल जॉनसन मानते हैं कि जो जिंदगी की छोटी-छोटी परेशानियों और तनाव में आकर खुद को उलझा लेते हैं, वे अपनी जिंदगी को बिना पतवार की नाव बना देते हैं। बुद्धिमान वह है, जो अपनी विषाणों की एकलयता और शांति से अपना सब कुछ गंवाते से बचा लेता है। वह इंसान का मौन है। मौन से वाणी और मन, दोनों को शांति मिलती है। मौन दो तरह का होता है- एक तो कुछ भी उच्चारण न करना और दूसरा, मन की गति को भी रोक देना। कम बोलने की आदत धीरे-धीरे बनानी पड़ती है। पहले मन में बेकार बोलने का प्रलोभन होगा, दूसरे की बातों में हस्तक्षेप करने की इच्छा होगी। पर, धीरे-धीरे जरूरत के अनुसार बोलने की आदत बन जाएगी। सिर्फ, अपनी जुबान यानी जीभ पर काबू रखिए। इससे कुछ समस्याएं पैदा हो ही नहीं होंगी। दुनिया को, लोगों को, अपने को सुनिए ज्यादा, देखिए ज्यादा और बोलिए कम। देखिए, मन शांत रहेगा। और मौन का संगीत आपके भीतर-बाहर सबको आनंद से तरंगित कर देगा। इसके बाद, जो शक्ति आप महसूस करेंगे, वह अजेय-अपरंपरा शक्ति होगी।
शशिप्रभा तिवारी

अलविदा नंदा
अजीबोगरीब फैसला
पिछले दिनों प्रकाशित 'डीडीए के रिहायशी मकानों में खोल सकेंगे दुकानें' शीर्षक खबर पढ़ी। डीडीए का यह फैसला खुद डीडीए पर प्रश्नचिह्न लगाता है। रिहायशी मकानों में दुकान खोलने देने की मांग सामूहिक नहीं, निजी ही हो सकती है। संभवतः यह सुझाव कमर्शियल सोच वालों का हो। सवाल यह भी पैदा होता है कि हमारी सरकारें आस्यों न होयानाओं को गंभीरता से क्यों नहीं लेती? होना तो यह चाहिए कि जहां कहीं भी रिहायशी बस्तियां हों, वहां बाकायदा कमर्शियल दुकानों के लिए

कैलाश चंद्र शिवहरे बलबौर विहार, नई दिल्ली
के के चौधरी वेस्ट गोस्वर्पाक, शाहदप, दिल्ली

के लिए वोट नहीं जुटा पा रहे हैं। कुछ इसी तरह का हाल राजस्थान में है। यहां भाजपा के 29 प्रतिशत मतदाता अपने वोट के लिए नरेंद्र मोदी को एक फैक्टर के रूप में आगे करते हैं। वहीं, 41 प्रतिशत भाजपा मतदाता पार्टी को तरजीह देते हैं। लेकिन वैसे भाजपा समर्थकों की संख्या अपेक्षाकृत कम है, जो मोदी के लिए ही पार्टी को वोट दे सकते हैं। ऐसे लोग सिर्फ 18 प्रतिशत हैं, जबकि पार्टी के नाम पर भाजपा को वोट देने की इच्छा जताने वालों की तादाद 44 प्रतिशत है। यहां तक कि गुजरात में भी वैसे भाजपा मतदाताओं की तादाद कम है, जो सिर्फ मोदी के ही नाम पर भाजपा को वोट देने की इच्छा रखते हैं, जबकि नरेंद्र मोदी एक दशक से अधिक समय से गुजरात के मुख्यमंत्री हैं। गुजरात में 19 प्रतिशत भाजपा वोटरों ने मोदी के ना पर मत देने के संकेत दिए और 41 प्रतिशत भाजपा मतदाताओं ने कहा कि वे पार्टी को पसंद करते हैं, इसलिए उनका वोट भाजपा के पक्ष में होगा। इससे यह साफ हो जाता है कि जिन राज्यों में भाजपा का शासन है, वहां सरकार की लोकप्रियता पार्टी के लिए मतदाताओं को आकर्षित कर रही है, न कि सिर्फ नरेंद्र मोदी का करिश्मा वोटरों को आकर्षित कर रहा है। अब बात करते हैं उन राज्यों की, जहां भाजपा अब भी हाशिये पर है। ऐसे राज्यों में मिले-जुले रुझान दिख रहे हैं। तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल और आंध्र प्रदेश में वैसे भाजपा समर्थकों की तादाद ठीक-ठाक है, जिन्होंने नरेंद्र मोदी के नाम पर भाजपा को वोट देने के संकेत दिए हैं। लेकिन दूसरे राज्यों में, जैसे कर्नाटक, केरल, असम और पंजाब में, जो मतदाता इस चुनाव में भाजपा को वोट देने के रुझान दिखा रहे हैं, उनमें से अधिकतर पार्टी को इसकी वजह बताते हैं, न कि नरेंद्र मोदी को। अगर इन रुझानों के साथ जाएं, तो शायद ही कोई यह कहेगा कि पूरे देश में मोदी की लहर है। जबकि मोदी लहर से कहीं अधिक भाजपा का जनाधार बढ़ता दिख रहा है। लगभग सभी मतदाता वर्गों, जैसे कर्नाटक, केरल, असम और पंजाब में, जो मतदाता इस चुनाव में भाजपा को वोट देने के रुझान दिखा रहे हैं, उनमें से अधिकतर पार्टी को इसकी वजह बताते हैं, न कि नरेंद्र मोदी को। (ये लेखक के अपने विचार हैं)

नजरिया

चुनाव के शिल्प से गायब होती कलाएं

इसे हम समकालीन वैचारिक प्रतिफलन या सांस्कृतिक अवमूल्यन के रूप में भी देख सकते हैं।

परिचय दास मैथिली-भोजपुरी साहित्यकार	
--	--

किसी भी राजनीतिक दल ने साहित्य, कला या संस्कृति को स्पष्ट रूप से अपने घोषणापत्र में प्रमुख स्थान नहीं दिया है। भारत की अगणित भाषाएं न्त हो रही हैं, ये किसी राजनीतिक दल की प्रमुख चिंता नहीं। साहित्य शायद उन्हें वोट नहीं दिला सकता। हो सकता है कि समाज साहित्य के बगैर न रह सकता हो, पर हमारे समाज की राजनीति तो उसके बिना ही चल रही है। राजनीति में कला के नाम पर ले-देकर फिल्मी लोगों का ही महत्व है। हालात हमेशा से ऐसे नहीं थे। आजादी के पहले के साहित्य को राजनीतिक व सामाजिक-कर्मों समझने का प्रयत्न करते थे। स्वयं राजनीतिक लोग भी सांस्कृतिक मन के होते थे। जयप्रकाश नारायण कविताएं लिखते थे। लोहिया ने <i>भारत माता</i>, <i>धरती माता</i> में राम, कृष्ण, शिव पर निबंध लिखकर व्याख्या की थी। दीनदयाल उपाध्याय ने हिंदी व भारतीय भाषाओं की वास्तविक जगह के लिए संघर्ष किया था। अंबेडकर ने सामाजिक संघर्ष का साहित्य तैयार करने की अपील की थी। आज ऐसे कितने लोग हैं? आज की राजनीति में तुकबंदी और शायरी सुनाने वाले कवि टाइप लोग भले चल जाएं, साहित्यकारों को दूर ही रखा जाता है। मान लिया गया है कि साहित्यकार वोट नहीं खींच सकते। पहले ऐसे लोग राज्यसभा, विधान परिषद में जगह पा जाते थे, अब ये रास्ते भी उनके लिए बंद हो रहे हैं। चित्रकारों, मूर्तिकारों वगैरह का भी यही हाल है। सियासी दलों में संस्कृति-विमर्श का	अब कोई अर्थ नहीं रह गया है। इंटरनेट, टेक्नोलॉजी, नई बुलेट ट्रेन, मेट्रो, सोशल मीडिया के दौर में राजनीतिक दलों को संस्कृति-विमर्श की जरूरत महसूस नहीं होती है। पहले राजनीतिक दलों के साथ बुद्धिजीवियों को जोड़ा जाता था। अब यह परंपरा खत्म हो गई। अब थिंकटैंक का जमाना है। और यह मान लिया गया है कि साहित्यकार और कलाकार थिंकटैंक नहीं हो सकते। इसीलिए यदि किसी दल के घोषणापत्र में साहित्य की समझ न मिले, तो हमें आश्चर्य नहीं करना चाहिए। इस समय सर्वोच्च पदों में से किसी पर भी साहित्यधर्मी नहीं हैं। आप चाहें, तो इसे समकालीन वैचारिक प्रतिफलन या सांस्कृतिक अवमूल्यन के रूप में भी देख सकते हैं। साहित्य और राजनीति के संबंध आलोचनात्मक यथार्थ के होने चाहिए। इतिहास व सांस्कृतिक विकास की जो संवेदकशील समझ साहित्य से मिलती है, शायद अन्य सामाजिक अनुशासनों से नहीं। सत्ता और व्यक्तित तथा समाज के अंतर्संबंधों की गहनता को साहित्य जिस सूक्ष्मता से बताता है, उसे आप किसी दूसरी तरह से नहीं जान सकते। यदि राजनीति शोषणयुक्त समाज चाहती है, तो साहित्य भी शोषणयुक्ति चाहता है, लेकिन उसमें संवेदनशीलता, आत्मीयता, सायात्मकता है। इसीलिए साहित्य विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है : एक अलग किस्म का गतिशास्त्र रखते हुए। क्या इसे हमारे राजनीतिक दल समझना चाहेंगे? (ये लेखक के अपने विचार हैं)
--	--